



मालवीय प्रकाश



मालवीय राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान जयपुर की हिन्दी त्रैमासिक पत्रिका

वर्ष -7

अंक - 13

जयपुर

अक्टूबर- दिसंबर 2025

पृष्ठ संख्या - 1

निदेशक की कलम से ...



आचार्य (डॉ.) नारायण प्रसाद पादी

निदेशक- मालवीय राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान जयपुर

मालवीय राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान जयपुर अपनी स्थापना के छह दशकों की यात्रा पूरी करते हुए आज शिक्षा, अनुसंधान, नवाचार और समग्र विकास के क्षेत्र में निरंतर नई ऊँचाइयों को स्पर्श कर रहा है। 'मालवीय प्रकाश' पत्रिका की इस त्रैमासिक कड़ी के माध्यम से आप तक संस्थान की उपलब्धियों और नवीन उपक्रमों को साझा करना मेरे लिए गर्व का विषय है।

हमें यह बताते हुए प्रसन्नता है कि हमारे संस्थान ने राष्ट्रीय संस्थान रैंकिंग फ्रेमवर्क (एन.आई.आर.एफ. 2025) में इंजीनियरिंग श्रेणी में 42वाँ, समग्र श्रेणी में 77वाँ तथा वास्तुकला एवं प्रबंधन श्रेणियों में भी

उल्लेखनीय स्थान प्राप्त किया है। सभी राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थानों में हम लगातार शीर्ष दस में स्थान बनाए हुए हैं। यह उपलब्धि हमारे संस्थान के शिक्षक गण, अशैक्षणिक एवं प्रशासनिक कर्मचारियों, विद्यार्थियों और पूर्व छात्रों के सामूहिक प्रयास का परिणाम है।

संस्थान का लक्ष्य उत्कृष्ट तकनीकी शिक्षा प्रदान करना, अनुसंधान और नवाचार को बढ़ावा देना तथा समाज के सतत विकास में योगदान देना है। हमारा उद्देश्य है कि भविष्य में हमारा संस्थान शिक्षा, शोध और उद्यमिता में वैश्विक स्तर पर अग्रणी बने। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अनुसार हमने संस्थान के भीतर उद्योग-सम्बद्ध पाठ्यक्रम, नवाचार एवं उद्यमिता संस्कृति को प्रोत्साहित करने की दिशा में निरंतर कदम बढ़ाए हैं। 'मालवीय प्रकाश' केवल हमारे संस्थान की उपलब्धियों का ही दर्पण नहीं है, बल्कि यह हमें पं. मदन मोहन मालवीय जी के कृतित्व और व्यक्तित्व की निरंतर स्मृति भी कराता है। यह पत्रिका हमें उनके शिक्षा-संस्कार और राष्ट्रनिर्माण के आदर्शों को आत्मसात करने की प्रेरणा देती है।

आइए, हम सभी मिलकर यह संकल्प लें कि संस्थान की प्रतिष्ठा और गुणवत्ता को और सुदृढ़ करते हुए देश के तकनीकी और सामाजिक विकास में अपना सर्वोत्तम योगदान देंगे।

आचार्य (डॉ.) नारायण प्रसाद पादी

सम्पादकीय...

प्रिय प्रबुद्ध पाठकों,

सादर नमस्कार,

मालवीय राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान जयपुर की त्रैमासिक पत्रिका 'मालवीय प्रकाश' के 13वें अंक का संपादन निश्चय ही संस्थान के हिन्दी भाषा प्रेमियों तथा साहित्यिक रुचि रखने वाले सदस्यों को प्रफुल्लित करेगा इसी आशा के साथ आपके समक्ष नया अंक लेकर प्रस्तुत हूँ। इस अंक में अपनी विभिन्न साहित्यिक कृतियों के माध्यम से अपना योगदान देने के लिये और इसके गतांकों के रचनाकारों एवं पाठकों को इस पत्रिका को बेहतर बनाने हेतु सुझावों के लिये अनेकानेक धन्यवाद।

प्रबुद्ध वर्ग में आने की वजह से समाज में शांति एवं संतुलन बनाये रखने में शिक्षकों की अहम भूमिका होती है क्योंकि शिक्षण एक व्यवसाय ही नहीं अपितु एक जिम्मेदारी भी है।

वर्तमान समाज में सूचना प्रौद्योगिकी के प्रचलन की वजह से, सोशल मीडिया के विभिन्न आयामों एवं मोबाइल के उपयोग के बाद, हर क्षेत्र में विचारों व सामाजिक गतिविधियों का वैश्वीकरण हो गया है, अतः समस्त विश्व का सामाजिक वातावरण कमोवेश एक सा ही है, अतः हमें समाज के स्वास्थ्य का वैश्विक घरातल पर अवमूल्यन करते हुये, उसमें व्याप्त हानिकारक घटकों को पहचानना एवं उसके निराकरण पर कार्य करना होगा।

यूँ तो समय काल एवं परिस्थिति के अनुसार समाज में विभिन्न प्रकार की बुराईयां पनपती हैं, पर इन सबका मूल कारण, समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार है, यह एक वैश्विक समस्या है जो जनमानस के समक्ष एक गंभीर चेतावनी के रूप में उभरी है। जिसमें लोग अपने व्यक्तिगत लाभ के लिये सार्वजनिक पद या शक्ति का दुरुपयोग करते हैं। इससे न केवल सामाजिक असमानता बढ़ती है, आर्थिक विकास घटता है बल्कि जन साधारण का सरकारी व गैर सरकारी तंत्र से विश्वास उठता है और सबसे गंभीर दुष्प्रभाव लोगों के मौलिक अधिकारों पर कुठाराघात होता है।

इसे जड़ से समाप्त करने के कई उपाय हैं जिनमें से मूल्य प्रेरित आध्यात्मिक एवं नैतिक शिक्षा, जिससे हमारे नैतिक एवं मानवीय गुणों का विकास होता है को सभी शैक्षणिक स्तरों व विभागों में अध्यापन द्वारा परिचय कराना, शिक्षा के प्रांरभिक स्तरों से ही इसका परिचय कराना एवं इन शिक्षाओं को आचरण में ढालने के लिये शिक्षकों व विद्यार्थियों को प्रेरित करना, समस्त विश्वजन को अपनी-अपनी संस्कृति पर गर्व करना व उससे जुड़ कर रहना।

अंत में मेरा यही विचार है कि समस्त प्रकार की भौतिक व कलात्मक शिक्षाओं की नींव आध्यात्मिक व नैतिक-शिक्षा पर आधारित हो ताकि हमारा अस्तित्व सुदृढ़ व सुखमय हो सके।

हर नये अंक के साथ नये-नये रचनाकारों के जुड़ने से तथा पाठकों की बढ़ती संख्या से पत्रिका की सार्थकता स्वतः सिद्ध हो रही है। खासकर लेखकों की कल्पनाओं और वास्तविकता के विविध आयामों पर उनके कृतित्व की क्षमता का बोध कराती है।

आप सभी ने पत्रिका की विषय वस्तु को नव रसों से भिगो दिया है। इसके लिये सभी लेखकों एवं हिंदी के प्रति अत्यंत समृद्ध रुचि रखने वाले पाठकों को बहुत-बहुत साधुवाद। अग्रिम अंकों में भी आपसे इसी तरह सहयोग प्राप्त होता रहेगा, इसी आशा के साथ,

सस्नेह,

आपकी शुभाकांक्षी

भवदीया,

आचार्य (डॉ.) ज्योति जोशी

सम्पादिका एवं आचार्य, रसायन शास्त्र विभाग, मालवीय राष्ट्रीय प्रौद्योगिकी संस्थान, जयपुर

Mobile : 9413971604, 9549654852 | malaviyaparakash.lokmat@gmail.com | jjoshi.chy@mniit.ac.in

महामना पंडित मदन मोहन मालवीय एक विलक्षण व्यक्तित्व

“मान का त्याग करने से सर्व के माननीय बनने का भाग्य प्राप्त होता है।”
मदन मोहन मालवीय

समग्र मूल्यांकन

व्यक्तित्व : पण्डित मदन मोहन मालवीय के कृतित्व एवं व्यक्तित्व की पत्रिका के पूर्वोद्धिखित संस्करणों में विशद व्याख्या की जा चुकी है। यहाँ उनका सार संक्षेप में एवं अन्य तथ्य प्रस्तुत किया जा रहा है।

स्वच्छ धवल वस्त्रों से सज्जित, सिर पर वही एक विशेष प्रकार का साफा, ललाट पर चन्दन की सुन्दर बिन्दी, इकहरा बदन, सात्विकता से उद्भाषित मुख मण्डल, यह पार्श्व रूप था पण्डित मदन मोहन मालवीय जी का, वे एक आदर्शभूत विशिष्ट हिन्दू थे।

वे एक सच्चे ब्राह्मण थे। उन्हें ब्राह्मणवाद की गौरवपूर्ण विरासत मिली थी। प्राचीनता और आधुनिकता का सुन्दर संगम उनके व्यक्तित्व में था। वे अंग्रेजी के सर्वोत्तम वक्ताओं में से थे, परन्तु उनकी वाग्मिता का उत्स उनका अगाध संस्कृत ज्ञान था।

पण्डित मदन मोहन मालवीय की सर्वतोमुखी प्रतिभा एवं व्यक्तित्व अद्भुत थे। वे निःसन्देह उच्चकोटि के

एक अनमोल शरित्सयत



महामना पंडित मदन मोहन मालवीय

जननायक तथा राष्ट्रनिर्माता थे। राष्ट्र के नेताओं में उनका बहुत ऊँचा स्थान था। राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन के विचार में मालवीय जी आदर्श मनुष्य थे, जिन्होंने राजनीति और शिक्षा दोनों क्षेत्रों में युग परिवर्तक और प्रवर्तक का काम किया। प्रिन्सीपल दीवानचन्द के विचार में मालवीय पवित्र आत्मा थे। उनके व्यक्तित्व की मनोहरता का उनके लाखों समकालीन लोगों पर उदत्त

शेष पृष्ठ 2 पर...

आत्मनिर्भर भारत के लिए मातृभाषा में तकनीकी शिक्षा

प्रस्तावना: किसी भी देश की आत्मनिर्भरता उस देश के मानव और प्राकृतिक संसाधनों पर निर्भर करती है। आज भारत की कार्यशील जनसंख्या विश्व के अन्य देशों के तुलना में कहीं अधिक है। यदि इन संसाधनों का सही उपयोग किया जाए तो भारत को विश्व शक्ति बनने से कोई नहीं रोक सकता।

इस लेख में इस मुद्दे के एक मुख्य परिप्रेक्ष्य मातृभाषा में तकनीकी शिक्षा पर विवेचना की गयी है। हमारा देश विविधताओं का देश है जहाँ 2 कोस पर पानी, चार कोस पर वाणी बदलती है। हालाँकि वाणी और भाषा में अंतर है, लेकिन यहाँ तात्पर्य यह है कि भारत में भाषाई विविधता है। जिसके कारण 22 भारतीय भाषाओं को संविधान में सूचीबद्ध किया गया है। देश के त्वरित विकास के लिए तकनीकी शिक्षा का मातृभाषा में प्रसारण आवश्यक है और इसे सिद्ध करने के लिए इस आलेख में कुछ महत्वपूर्ण बिंदुओं पर चर्चा की गई है।

परिचय: एक राष्ट्र के विकास के लिए तकनीकी शिक्षा एक महत्वपूर्ण आधार है। कलयुग अर्थात् मशीनों के युग में विकसित देश की कल्पना तभी संभव है जब वह देश तकनीकी रूप से आत्मनिर्भर हो। इसके लिए आवश्यक है देश में तकनीकी शिक्षा और प्रशिक्षित लोग।

भारत ऋषि मुनियों अर्थात् वैज्ञानिकों का देश रहा है, जिन्होंने आज से हजारों वर्ष पूर्व वेदों और उपनिषदों के माध्यम से संसार को अथाह ज्ञान दिया। यह सब मुमकिन हो पाया, क्योंकि समस्त सूचनाओं का प्रेषण वैज्ञानिकता से परिपूर्ण मातृभाषा संस्कृत, जो कि समस्त भारतीय भाषाओं की जननी भी है, से होता था। पाणिनि की अष्टाध्यायी, सुश्रुत की सुश्रुत संहिता, चाणक्य की अर्थशास्त्र, ब्रह्मगुप्त की ब्राह्मस्फुटसिद्धान्त और भी



कितनी ही महान रचनाएँ और उनके रचयिता हमारे देश में हुए हैं। आजकल के अनगिनत शोध पत्र भी उस ज्ञान रूपी सूर्य के आगे प्रभाहीन हैं।

भाषा और आत्मनिर्भरता : भारत सदैव से ही आत्मनिर्भर था और पूरी दुनिया भारत को जानने के लिए उत्सुक (उद्ग्रि) थी। जब भारत का यश यूरोपीय देशों तक फैला, तो उन्होंने यहाँ तक पहुँचने के लिए हर संभव प्रयास किया और अंततः सफल हुए। जब से अंग्रेजों ने दुनिया भर के विभिन्न स्थानों और महाद्वीपों में अपने उपनिवेश स्थापित किये, तब से अंग्रेजी ने विश्व भाषा का स्थान ले लिया है। विशेषकर भारत में अंग्रेजी का वर्चस्व बढ़ता जा रहा है।

भारत की सत्तर प्रतिशत जनता गाँवों में रहती है और अपनी मातृभाषा बोलती एवं समझती है, वहीं नगरीय जनसँख्या कम है और अंग्रेजी भाषा में वार्तालाप कर गर्व की अनुभूति करती है। तथापि, यहाँ देखने लायक बात यह है कि जब भी दो व्यक्ति मिलते हैं तो वे अपने विचार मातृभाषा में ही व्यक्त करने में सहज महसूस करते हैं। यह तथ्य दर्शाता है कि हम किसी दूसरी भाषा से कितना भी प्रभावित हों या उसकी ओर झुकने की कोशिश करें, जड़ें हमें अपनी ओर खींचती हैं। ज्ञान का

शेष पृष्ठ 2 पर...

इस अंक में ...		
विवरण	पृष्ठ संख्या	जिन्दगी और मौत का संवाद
निदेशक की कलम से	1	डिब्बे की दुनिया, पटरी की बातें
महामना - एक विलक्षण व्यक्तित्व	1	हिन्दू हो या मुस्लिम
सम्पादकीय	1	कहाँ ले आई रे जिज्ञासा तू
आत्मनिर्भर भारत	1	आधुनिक शिक्षा में संस्कारों का महत्व
एक लड़की की यात्रा	2	छोटा बच्चा
मैं, मैं हूँ	2	एक लड़कू
राम को प्रणाम	2	महबूब की बातें
दिग्विजय	3	हौसला
ये किसान इंसान है	3	हमारी बिटिया एक बरदान
सब अपने घर में हैं	3	जलवायु परिवर्तन से बचने का उपाय
सहकारी आंदोलनों में हिन्दी का योगदान	4	धर्म, कर्तव्य और नैतिकता के प्रेरक
		संघर्ष

एक लड़की की यात्रा

एक छोटे कस्बे के साधारण से स्कूल में पढ़ने वाली एक लड़की हमेशा से मेहनती थी। उसके सपने बड़े थे, पर उसका रास्ता आसान नहीं था। वह हिंदी माध्यम से पढ़ी थी जहाँ किताबें, शिक्षक और दोस्त सब हिंदी में ही सहज थे। उसे कभी लगा ही नहीं था कि आगे चलकर उसे उस दुनिया में जाना होगा जहाँ हर शब्द, हर किताब और हर बातचीत अंग्रेज़ी में होगी।

बारहवीं पूरी करने के बाद जब उसने जेईई का इम्तहान दिया, तो उसके दिल में उम्मीद और डर दोनों थे। रातरात भर जागकर पढ़ना, कॉपी भरभर कर सवाल हल करना और एकएक नंबर के लिए संघर्ष करनाये सब उसकी दिनचर्या का हिस्सा बन चुका था। जब चयन हुआ तो घर में खुशियाँ छा गईं। परिवार गर्व से भर गया कि उनकी बेटी अब इंजीनियर बनने जा रही है। लेकिन लड़की जानती थी कि असली परीक्षा अभी शुरू हुई है।

पहला साल डर और अकेलापन : कॉलेज का पहला दिन मानो किसी नए ग्रह पर कदम रखने जैसा था। क्लासरूम में टीचर्स तेज़ तेज़ अंग्रेज़ी बोलते, दोस्त आपस में अंग्रेज़ी में बातचीत करते। वह सुन तो लेती थी, पर बोल नहीं पाती थी।

हर वक्त उसे यही डर खाता था ‘कहीं अनुपूरक परीक्षा ना देनी पड़े और अग अनुतीर्ण हो गई तो सब हँसेंगे।’ इस डर ने उसे और ज्यादा अनुशासित बना दिया। वह इतनी समयनिष्ठ हो गई कि क्लास में कभी एक मिनट भी लेट नहीं जाती। उसे लगता अगर देर से पहुँची तो सबकी नज़रें उसी पर होंगी। सबसे कठिन वक्त आता था मौखिक परीक्षा का। सवाल समझ में आता, पर जब बोलने की बारी आती, उसकी जुबान जैसे बंद हो जाती। वह चुप खड़ी रहती और बाद में कमरे में जाकर रोती। कई बार लगा कि शायद उसने गलत रास्ता चुन लिया है।

दूसरा साल छोटे कदम, बड़ी उम्मीद : लेकिन लड़की ने हार मानने से इंकार कर दिया। उसने खुद से वादा किया कि चाहे कितनी भी मुश्किल हो, वह लड़ाई लड़ेगी। उसने छोटे छोटे क़दम उठाने शुरू किए: हर दिन कुछ नए अंग्रेज़ी शब्द याद करना। यूट्यूब पर बेसिक इंग्लिश के वीडियो देखना। धीरे धीरे दोस्तों से बात करने की कोशिश करना। और सबसे ज़रूरी, खुद पर भरोसा करना। लोग हँसते भी, पर उसे फर्क नहीं पड़ा।



धीरे धीरे बदलाव दिखने लगा। वह अब क्लास में नोट्स अच्छे से बना पाती, कभी कभी सवाल पूछ लेती। उसकी आँखों में जो डर था, उसकी जगह हल्की सी चमक ने ले ली।

तीसरा साल आत्मविश्वास की वापसी : समय के साथ उसने खुद को बदलना शुरू किया। प्रेजेंटेशन देने लगी। शुरू में आवाज़ काँपती थी, हाथ पसीजते थे, मगर हर बार स्टेज पर खड़े होने से उसका आत्मविश्वास बढ़ता गया।

दोस्त और शिक्षक अब उसकी मेहनत को पहचानने लगे। वही लड़की जो कभी चुपचाप कोने में बैठ जाती थी, अब अपनी बात रखने लगी। उसे समझ आया कि भाषा सिर्फ एक माध्यम है, असली ताक़त मेहनत और लगन में है।

चौथा साल एक नई पहचान : आज, चौथे साल में पहुँचकर, वह लड़की अपने सफर को देखकर खुद हैरान होती है। वही जो कभी अनुपूरित परीक्षा के डर से काँपती थी, अब आत्मविश्वास से परीक्षाएँ देती है। जो कभी मौखिक परीक्षा में बोल नहीं पाती थी, आज बिना झिझक अपने विचार रखती है। वह जानती है कि उसकी असली जीत सिर्फ अच्छे अंकों नहीं हैं, बल्कि वह बदलाव है जो उसने खुद में लाया।

अब जब वह पीछे मुड़कर देखती है तो आँखों में आँसू आ जाते हैंपर ये आँसू डर के नहीं, गर्व के होते हैं। वह सोचती है, हाँ, रास्ता कठिन था... पर मैंने हार नहीं मानी। यही मेरी सबसे बड़ी जीत है।

- **पूजा मीणा (तृतीय वर्ष जनपद अभियांत्रिकी)**

पेज नं. 1 का शेष

मालवीय एक विलक्षण व्यक्तित्व

प्रभाव था। बंगाल के सुप्रसिद्ध देशभक्त वैज्ञानिक सर प्रफुल्लचन्द्र राय का विचार था कि गाँधीजी के बाद कोई दूसरा ऐसा मनुष्य मिलना कठिन है, जिसने इतना अधिक त्याग किया हो और बहुमुखी कार्यों का ऐसा प्रमाण प्रस्तुत किया हो, जैसा मालवीय जी ने लिबरल पार्टी के प्रमुख नेता श्री सी. वाई. चिन्तामणि का भी विचार है कि मालवीय ही एक ऐसे व्यक्ति हैं जो साबरमती के मनीषी (गाँधीजी) के साथ कोष्ठक में रखने योग्य है।

उदार दलीय नेता पण्डित हृदयनाथ कुंजरु का विचार है कि गाँधीजी को छोड़कर उनसे बड़ा भारतीय कोई नहीं हुआ। मुंशी ईश्वरशरण का कहना है जब तक भारत गाँधीजी और मालवीय जैसे व्यक्तियों को जन्म देता रहेगा, तब तक भारत जीवित बना रहेगा।

भर्तृहरि ने महात्मा के प्रकृति सिद्ध लक्षणों का वर्णन करते हुए कहा है विपदि धैर्यमथाभ्युदये क्षमा, सदसि वाक्पटुता युधि विक्रमः। यशसि चाभिरुचिर्व्यतनं श्रुतौ, प्रकृतिसिद्धिमिदं हि महात्मनाम्॥ (विपत्ति में धैर्य, सम्पत्ति में क्षमा, सभा में वाक्पटुता, युद्ध में विक्रम, यश में रुचि, शास्त्र में लगनये गुण महात्माओं में स्वभाव से ही होते हैं।) ये सभी गुण मालवीय में स्वभावतः विद्यमान थे और वे निःसन्देह बहुगुण सम्पन्न महात्मा थे।

धर्ममय जीवन :- ईश्वर भक्ति और देशभक्ति पण्डित मदन मोहन मालवीय के जीवन के दो मूलमन्त्र थे। इन दोनों का उत्कृष्ट संश्लेषण, ईश्वर भक्ति का देशभक्ति में अवतरण तथा देशभक्ति की ईश्वर भक्ति में परिपक्वता उनके व्यक्तित्व का विशिष्ट सद्गुण था। मनुष्यत्व की ईश्वरत्व में परिणति उनके जीवन की सर्वोत्तम आराधना थी। वे निःसन्देह मनुष्यता की उत्कृष्ट अभिव्यक्ति थे। पण्डित मदन मोहन मालवीय उच्चकोटि के तपस्वी थे। श्रीमद्भगवद्गीता में वर्णित कायिक वाचिक और मानसिक तप के साधक थे। काम, क्रोध, लोभ तथा मोह से अपने को बचाये रखना ही उनका मानसिक तप था। सत्यप्रिय एवं हितकारी शब्दों का सतत प्रयोग उनका वाचिक तप था। परसेवा तथा देशसेवा उनका शारीरिक तप था।

पण्डित मदन मोहन मालवीय धर्मनिष्ठ धर्मज्ञ थे। धर्म में उनकी अटल श्रद्धा थी। धर्म के मूल सिद्धान्तों का उन्हें अच्छा ज्ञान था। वे ही उनके जीवन के आधार थे। वे नित्य

विधिपूर्वक पूजापाठ करते, शास्त्र विहीत आचार का पालन करते, श्रीमद् भागवत् तथा श्रीमद्भगवद् गीता आदि ग्रन्थों का अध्ययन करते, पारलौकिक विषयों पर भी समय मिलने पर चिन्तन मनन करते तथा लोक कल्याण एवं देश उद्धार में संलग्न रहते थे।

देशभक्त : गाँधीजी ने मालवीय जी का अभिवादन करते हुए लिखा मैं तो मालवीय जी महाराज का पुजारी हूँ। पुजारी कैसे स्तुति के वचन लिख सके? जो कुछलिखेगा उसे अपूर्ण सा प्रतीत होगा। आज मालवीय जी के साथ देशभक्ति में कौन मुकाबला कर सकता है? यौवनकाल से आरम्भ करके आज तक उनकी देशभक्ति का प्रवाह अविच्छिन्न आया है।

वस्तुतः पण्डित मदन मोहन मालवीय उच्चकोटि के देशभक्त थे। देश की स्वतन्त्रता तथा जनता का सर्वाङ्गीण उत्कर्ष उनकी देशसेवा के मुख्य लक्ष्य थे। वे सब जातियों, सम्प्रदायों और प्रान्तों के निवासियों को मिलाकर भारतीय राष्ट्र का निर्माण करना चाहते थे। वे प्रायः कहा करते थे कि जो काम दूसरों का अहित करने के लिए किया जाता है, वह तामसी है।, जो अपनी स्तुति, पूजा तथा प्रतिष्ठा प्राप्ति के लिए किया जाता है, वह राजसी है। निःसन्देह पण्डित मदन मोहन मालवीय निःस्वार्थ समाजसेवी थे।

सात्विक सार्वजनिक जीवन : पण्डित मदन मोहन मालवीय अपने सार्वजनिक जीवन में सर्वदा पवित्रता से ओतप्रोत रहे। वे काम स्वयं करते थे परन्तु यशलाभ के लिए दूसरों को आगे कर देते थे। अपने साथियों पर वे सदा विश्वास करते, उनके प्रति सद्भावना रखते और उनके सहयोग और परामर्श की कद्र करते थे। वे सात्विक विरोध का आदर करते, परन्तु बेकार के कटाक्ष और तिरस्कार की उपेक्षा करते थे। स्वामी श्रद्धानन्द ने अपने एक संस्मरण में कहा कि दलबन्दी कर नेता बनने की इच्छा से वे कोसों दूर थे। वह जो कुछकाम करते उसमें देशभक्ति और सेवाभाव सर्वोपरि रहता था।

जनसाधारण की सेवा : जमींदार, व्यापारी, राजा, महाराजा, सभी पण्डित मदन मोहन मालवीय का आदर करते, उन्हें पूज्य समझते और उनके रचनात्मक कार्यों में उनकी सहायता करते थे। मालवीय जी निरन्तर जनसाधारण की सेवा को महत्व देते थे।

.... शेष अगले में

- **आचार्य (डॉ.) ज्योति जोशी**

मैं, मैं हूँ



इरादे बेडौल हैं, वादे मखौल हैं, आवाज़ दबी है, बात अड़ी है। कंटीली राहें हैं, मुलायम बाहें हैं सीने में ख़ामोश अगन है, खौलती लगन है, उड़ता मन है, टूटता तन है, बेनाम लक्ष्य है, बदनाम अक्स है, होती सुबह है, डूबाती प्रलय है। मैं गुमनाम हूँ, शहर सुनसान है। खोई भी खुद हूँ, खुद को ढूँढती भी खुद हूँ। शोर मचाती आहट है, ख्यालों की चहचहाहट है। मन की आँखें बंद हैं, दिमागी आँखें मंद है। खुद को सुनने की बेक़रारी है, ग़ैर को सुनना लाचारी है। कटे परों की चिड़िया हूँ सजी सँवरी गुड़िया हूँ। पर जोड़ने की तैयारी है, बंद कमरे की चार दीवारी है। काटना, दौड़ना, उड़ना, गिरना, मेरे हक की बात है, डूबना, तैरना, फिसलना, कुछ डर की भी रात है। डर अंधेरे का है, इस काले पहरे का है। बीच पर्दों में कैद है, पर्दे हटाना अवैध है। मैं, मैं हूँ। कैद, आज़ाद, बेनाम, बदनाम, जो भी, जैसी भी जैसा कोई नहीं, वैसी भी। मैं, मैं हूँ।

- नीतू कलशान (शोधार्थी रसायन शास्त्र)

पेज नं. 1 का शेष

आत्मनिर्भर भारत के लिए मातृभाषा में ...

मानदंड किसी विदेशी भाषा को धाराप्रवाह बोलना नहीं हो सकता।

मनोवैज्ञानिक कारण: मनोवैज्ञानिक रूप से भी, एक विद्यार्थी दूसरी भाषा में इतनी तीव्रता से नहीं सीख सकता, जिस तीव्रता से वह अपनी मातृभाषा में सीखता है। आजकल सभी विद्यालयों में देखा जा सकता है कि विद्यार्थियों को अंग्रेजी की ओर धकेला जा रहा है। परन्तु यह बाध्यता विद्यार्थी के कुछ नया सीखने के प्रयासों को किनारे कर देती है और उसकी ऊर्जा विषय अधिगम के स्थान पर विदेशी भाषा में अनुवाद करने में व्यर्थ होती है। विदेशी भाषा में किसी विषय को समझने में समय तो ज्यादा लगता ही है, उतनी स्पष्टता भी नहीं मिलती और व्यक्ति विषय ज्ञान में पीछे रह जाता है। अतैव, विदेशी भाषा को केवल एक विषय जैसा ही मानना चाहिए। हमारा लक्ष्य विषय को सीखना होना चाहिए न कि उसका अनुवाद करना। उदाहरणार्थ, रूस में रूसी, फ्रांस में फ्रेंच, जर्मनी में जर्मन, चीन में चीनी भाषा में पढ़कर भी वहां के लोग तकनीक में विश्व के अन्य देशों से आगे हैं। अतः हमें समझना होगा कि यदि भारत में तकनीकी शिक्षा मातृभाषा में प्रदान की जाए, तो भारत की प्रतिभाएं संसार में सबसे आगे होंगी और भारत को पुनः विश्व गुरु बनने से कोई नहीं रोक पायेगा।

भाषा: देश का गौरव : 19वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में, स्व. भारतेन्दु हरिश्चंद्र जी ने स्थिति को बहुत भांपते हुए शिक्षा का विसरण मातृभाषा में करने पर जोर देते हुए कहा था कि स्वयं की भाषा में ज्ञानार्जन में ही उन्नति का मूल हैं और सब देशों से ज्ञान एकत्र करके भी मातृभाषा में ही उसे प्रसारित करना चाहिए। इसी संदर्भ में पंडित मदन मोहन मालवीय जी ने अपने विचार इस तरह उद्धरित किये हैं -

“निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।

बिन निज भाषा-ज्ञान के, मिटत न हिय को मूल ।।

विविध कला शिक्षा अमित, ज्ञान अनेक प्रकार।

सब देसन से लै करहू, भाषा माहि प्रचार ।।”

किसी भी राष्ट्र की प्रगति के लिए उसके नागरिकों में राष्ट्रीयता और देश के प्रति गौरव की भावना का होना ज़रूरी है। उनमें यह गौरव की भावना तभी पैदा हो सकती है जब वे किसी दूसरी भाषा के चरणों में बैठने के स्थान पर अपनी भाषा में चर्चा करें, सीखें और तर्क करें। यदि देश के युवाओं को देश के प्रति जागरूक करना है और गर्व की भावना को उत्प्रेरित करना है, तो उन्हें मातृभाषा में ज्ञान देना आवश्यक है। जब 'इसरो' बगैर किसी विदेशी सहयोग के न्यूनतम खर्च में चंद्रमा पर चंद्रयान भेज सकता है तो देश के नागरिक और युवा क्या नहीं कर सकते? हमारा देश चतुर्मुखी प्रतिभाओं से भरा हुआ है, बस आवश्यकता है तो उन्हें सही पद्धति से शिक्षा प्रदान करने की। मातृभाषा में शिक्षा लोगों तक सुगमता से पहुंच सकती है और उनका ज्ञानवर्धन कर देश को ऐसे स्तर पर ले जा सकती है, जिसकी अन्य देश कल्पना भी नहीं कर सकते। ऐसा होगा तो हमारा देश स्वतः तकनीकी शिक्षा में प्रगति करेगा, आविष्कारों के नये आयाम स्थापित होंगे और देश की आत्मनिर्भरता को गति मिलेगी।

सार : भारत सरकार इस ध्येय की दिशा में प्रयास कर रही है और देश की जनता भी धीरे-धीरे अपनी मातृभाषा के प्रति जागरूक हो रही है। क्षेत्रीय भाषाओं में शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए भारत सरकार ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 का सूत्रपात किया है। यद्यपि, भारत जैसे विविधतापूर्ण देश के लिए यह लक्ष्य थोड़ा जटिल हो सकता है, लेकिन असंभव नहीं है। इन प्रयासों के परिणाम अंततः दूरगामी और देश के लिए लाभकारी होंगे और प्रौद्योगिकी के साथ अन्य सभी क्षेत्रों में भी भारत को आत्मनिर्भर होता हुए देखेंगे।

- डॉ. ऋतु अग्रवाल

सहायक आचार्य, गणित विभाग

राम को प्रणाम

हे राम, मेरे प्रभु, देव प्राण, हृदयातल से तुमको प्रणाम इक्ष्वाकु वंश में देव रूप, दशरथ के सम भाव स्वरूप, कौशल्या के हितकारी तुम, कैकेयी के आभारी तुम, गुरु वशिष्ठ की प्रतीक्षा फल, राजा दशरथ की इच्छा फल। शूनी राजभवन के दीपक, व्याकुल वसुधा के शुभचिंतक हे महापुरुष। हे देव प्राण, हृदयातल से तुमको प्रणाम। अहिल्या को तारा तुमने, ताड़का को मारा तुमने, शिव धनु तोड़ इतिहास रचा, जनकसुता संग ब्याह रचा। पितु वचन निभाने वन जाना, राम में राम देव पाना। रघुवंश लाज बचाने हित, वसुधा से पाप मिटाने हित। सागर में तुमने सेतु रचा, रावण वंश मिटाने हेतु रचा। हे धनुर्धारी हे सिया प्राण हृदयातल से तुमको प्रणाम। हे कौशल्या के प्राण पियारे, हे दशरथ के राज दुलारे, हे अवधवासियों के स्वामी हे मेरे प्रभु, अंतर्धामी हे महाबली के महाप्रभु, हे महाकाल के महाप्रभु। हृदयातल से तुमको प्रणाम।

- राम प्रकाश शुक्ला

(प्रथम वर्ष- स्नातोकोत्तर भौतिकी शास्त्र विभाग)

दिग्विजय

माँ, मुझे संन्यासी बनना है।

आठ वर्ष के बालक ने गम्भीर स्वर में कहा।

माँ ने, हर बार की तरह इस बार भी उसकी बात अनसुनी कर दी। परंतु बालक आज दृढ़ निश्चय करके आया है कि आज तो माँ से अनुमति लेकर ही रहेगा। यह पहली बार नहीं था जब उसने संन्यास की इच्छा प्रकट की हो। बीते कई वर्षों से वह बारबार माँ से यही आग्रह कर रहा था। जब उसने पहली बार अपनी बात माँ के सामने प्रस्तुत की थी तो माँ विस्मित रह गई थी। उस वक्त माँ ने उसे यह कहकर टाल दिया था कि ‘अभी नहीं बेटा, अभी तो सावन का महीना है। इस ऋतु में कोई संन्यास नहीं लेता। वर्षा ऋतु बीत जाने दो, फिर सोचेंगे।’ बालक ने भी उस समय माँ की बात मान ली थी।

माँ यह सोचकर चकित थी कि इतनी छोटी आयु का बच्चा संन्यास जैसे कठोर मार्ग की बात कैसे कर सकता है। बड़ेबड़े लोग जीवन भर मोहमाया में फँसे रहते है और यह नन्हा बालक सब कुछ त्यागने की बात करता है। माँ ने यह निष्कर्ष निकाला कि शायद इसे ठीक से पता ही नहीं कि संन्यास होता क्या है।

माँ को विश्वास था कि बच्चों की इच्छाएँ क्षणभंगुर होती हैं, कुछ ही दिनों में यह लगाव भी मिट जाएगा। माँ ने अपने पुत्र को बड़े लाड़प्यार से पाला था। उन्होंने उसे कभी भी पिता की कमी महसूस नहीं होने दी थी। उनका पुत्र ही उनके जीवन का आधार था। यदि कभी वह थोड़ी देर के लिए भी आँखों से ओझल हो जाता तो वह व्याकुल हो उठतीं। यही गहरा मोह शायद उनके लिए परदा बन गया था, जिसके कारण वे यह नहीं देख पाई कि उनका पुत्र असाधारण है।

दरअसल, उसमें कई बातें थीं जो उसे अन्य बच्चों से भिन्न बनाती थीं। खेलकूद में उसका मन नहीं लगता। प्रायः वह पेड़ के नीचे बैठकर घंटों प्रकृति को निहारता रहता। उसके चेहरे पर तब एक शांत, अद्भुत मुस्कान रहती। कभी भी किसी ने उसे क्रोध में नहीं देखा था। उसके आचरण में जैसे किसी महात्मा की गम्भीरता झलकती थी। हाँ, उसके मन में केवल एक ही भय था कि यदि वह माँ द्वारा बाँधे गए मोह के बंधन से मुक्त न हो पाया, तो उसका जीवन व्यर्थ हो जाएगा।

उसे गृहस्थी और सामाजिक जीवन में तनिक भी रुचि नहीं थी। परंतु यह बात वह अपनी माँ को समझा नहीं पाता था। जब जब वह संन्यास की बात करता, माँ किसी न किसी बहाने से उसकी जिज्ञासा टाल देतीं। उन्हें यह बस एक नादान बालक की अल्पकालिक इच्छा लगती। लेकिन आज उसने ठान लिया था कि माँ से सीधा उत्तर लेकर ही रहेगा।

माँ ने ध्यान नहीं दिया।

बालक ने फिर कहा ‘मां, मुझे संन्यासी बनना है।’ अबकी बार उसका स्वर ऊँचा था।

माँ ने आश्चर्य से उसकी ओर देखा। यद्यपि उन्होंने उसे पहले भी गम्भीर मुद्रा में देखा था, लेकिन आज उसके चेहरे का तेज कुछ और ही था। उसकी आँखें जैसे सीधा उत्तर माँग रही थीं। और माँ उन आँखों से झूठ नहीं बोल पाई। ‘नहीं पुत्र, नहीं।’ माँ ने ठंडी साँस भरते हुए कहा, ःसंन्यास मार्ग अत्यंत कठिन है। मैं कैसे तुम्हें अकेले उस मार्ग पर जाने की अनुमति दे दूँ? और तुम संसार का त्याग क्यों करना चाहते हो? मेरी आकांक्षाओं का क्या होगा? क्या तुम वृद्धावस्था में मुझे अकेला छोड़ दोगे? क्या मेरी यह अभिलाषा गलत है कि मैं तुम्हारी गृहस्थी देखूँ, तुम्हारा भी परिवार हो, वंश आगे बढ़े?’

माँ के शब्द सुन बालक शांत भाव से देखता रहा। फिर गहरी साँस लेकर बोला कौन पुत्र, माता? आप किसे अपना पुत्र कहती हैं? इस हाड़मांस के शरीर को? नहीं माँ, नहीं। अपनी आँखों से अज्ञान का पर्दा हटाइए और विवेक का प्रयोग कीजिए।

संन्यास कष्ट का मार्ग नहीं, कल्याण का मार्ग है। संन्यासी संसार का त्याग करता है संसार ही के लिए । संन्यासी निःस्वार्थ होता है, वह अपने परिवार के केवल चार पाँच लोगों के लिए नहीं, अपितु पूरे संसार को अपना परिवार मानकर उनके लिए कार्य करता है। संन्यासियों का तेज ही तो है जो पृथ्वी माता के ऊपर से

पापियों का बोझ कम करता है। मनुष्य जीवन की उच्चतम अवस्था है संन्यास। संन्यासी अहंकार का त्याग करता है, अपने मैं को मिटा देता है और केवल परोपकार के लिए जीता है। हर मनुष्य का कर्तव्य है कि वह अपने कर्म इस प्रकार करे जो उसे संन्यास अवस्था की ओर ले जाएँ। माँ, मैं तो ईश्वर का ऋणी हूँ, जिनकी कृपा से मुझे संन्यास की ओर आकर्षण हो रहा है। गृहस्थी और भोग की इच्छाएँ पतन कराने वाली हैं। आपकी यह इच्छाएँ हमें गहरे बंधन में डाल देंगी। इसमें न तो मेरा कल्याण है और न आपका ही।

यह शरीर स्वभावतः कुछ समय युवा रहता है, फिर वृद्ध होता है और अंततः मृत्यु को प्राप्त होता है। जो आत्मा इस सत्य का अनुभव नहीं करती, वह भी इसी देह में फँसी रह जाती है और जन्ममृत्यु के चक्र से बाहर नहीं निकल पाती। ऐसी आत्मा तो केवल दुःख में ही भटकती है। नहीं माँ, नहीं... मुझे इस माया और दुःखसागर संसार में मत बाँधिए। जिसे आप अपना पुत्र कहती हैं, वह तो केवल शरीर है। आज नहीं तो कल, यह आपसे दूर हो ही जाएगा। मुझे अपने सत्य स्वरूप की खोज में जाने दीजिए, माँ मुझे जाने दीजिए।

तू तो सचमुच बड़ा हो गया... आत्मा और शरीर की इतनी बातें करने लगा। परंतु बेटा, तेरी यह बातें एक माँ के हृदय को समझ नहीं आतीं। मैं बस इतना जानती हूँ कि तू मेरा पुत्र है और मुझे छोड़कर कहीं नहीं जाएगा। अगर तुझे जाना ही है तो जा... लेकिन मैं अपनी ओर से कभी अनुमति नहीं दूँगी।

बालक ने नम्र स्वर में कहा-

‘मां, आप जानती हैं कि मैं आपकी अनुमति के बिना कहीं नहीं जाऊँगा। आपको दुःखी करके मेरा संन्यास भी सिद्ध नहीं होगा।’ ‘तुझे मेरा आदेश ही सुनना है तो यही मेरा आदेश है कि तू कहीं नहीं जाएगा।’ यह कहकर माँ बाहर चली गई।

अं द र ब स अँधेरा रह गया जो डूबते सूरज के साथ और गहरा होता जा रहा

था। यह बताना कठिन था कि इस अँधेरे का स्रोत सूर्य का न होना था या बालक का विषाद..... वर्षा रुक चुकी है। सूर्य कभी अपना प्रकाश फैलाता और कभी बादलों द्वारा ढक लिया जाता। तेज़ हवाएँ पत्तियों को अपने साथ बहाकर ले जाना चाहती हैं, मगर वे डालियों की पकड़ से स्वयं को आज़ाद नहीं कर पा रही हैं। नदी का स्तर भी बढ़ चुका है और अपने तट की मर्यादा तोड़कर पानी खेतों में बहा जा रहा है। मगर नदी में एक छोटासा टापू अपनी पहचान लिए अभी भी पानी के स्तर से कुछ ऊपर है। यह जगह बस इतनी सी है कि वहाँ मुश्किल से पाँच मनुष्य बिना भोगे बैठ सकते हैं। अभी वहाँ एक बालक ही बैठा है और नदी को निहार रहा है। उस बात को एक महीना बीत चुका है, मगर बालक अभी भी यही सोच रहा है कि वह अपनी माता से संन्यासी बनने की आज्ञा कैसे माँगे। इस बीते महीने में उसके और माता के बीच संन्यास को लेकर कोई बातचीत नहीं हुई। और माता इस बात से प्रसन्न थीं कि उनके पुत्र के मन से संन्यास का विचार उतर गया।

बालक ये सोच ही रहा था कि पानी में कुछ हलचल हुई। उसने जब ध्यान से देखा तो पाया वहाँ लगभग पन्द्रह हाथ लम्बा मगरमच्छ तैर रहा है और उसके मुँह से निकलने वाली हवा पानी में बुलबुले बना रही है। बालक अपनी जगह खड़ा हो गया। मृत्यु रूपी भयानक मगरमच्छ को देखकर भी उसके चेहरे पर भय का कोई चिह्न नहीं था।

अब तक गाँव वालों ने भी देख लिया था कि एक बालक बीच नदी में फँसा हुआ है और उसके चारों ओर एक विशालकाय मगरमच्छ चक्कर लगा रहा है। गाँववालों ने ज़ोर ज़ोर से शोर मचाया, पानी में पत्थर फेंके, मगर इन सब से मगरमच्छ को कोई फर्क नहीं पड़ा।

इसी बीच कोई उस बालक की माता को भी बुला लाया। माता ने जब अपने पुत्र को ऐसा फँसा देखा तो उनके मुँह से चीख निकल गई, पुत्र... ! नहीं... नहीं....

ऐसे विलाप करते हुए वे पानी में प्रवेश करने ही लगी थीं, मगर कुछ गाँववालों ने उन्हें पकड़कर रोक लिया। माँ ने बहुत प्रयत्न किया, मगर गाँववालों ने उन्हें नदी में नहीं जाने दिया। अब माँ तट पर बैठकर रोने लगी।

इतने में ही उन्हें आवाज़ सुनाई दी

माँ... माँ... माँ... !

अब तक जो बालक शान्त खड़ा यह सब देख रहा था, उसने पुकारा। माँ एकदम से खड़ी हो गई और अपने पुत्र को देखने लगी। ‘माँ ! देखो, मृत्यु देवी ने मुझे घेर लिया है।’माँ कुछ न बोल सकीं, बस आँखों से धारा प्रवाह अश्रु बहते रहे। ‘माँ ! क्या मैं कुछ माँगू तुमसे? बालक ने पुकारते हुए पूछा। कहो पुत्र। माता के मुख से बहुत धीरे से ये दो शब्द निकले। और फिर उन्होंने साँस भरकर हिम्मत जुटाते हुए बालक को उत्तर दिया ‘जो माँगना है पुत्र, माँग ले, बस सुरक्षित मेरे पास आ जा।’ ‘माँ। मुझे संन्यास की आज्ञा दे दो।’ बालक ने उसी प्रकार अपनी बात रखी।

यह सुनकर माँ स्तब्ध रह गई। गाँववाले आश्चर्य से बालक को देखने लगे। उनके लिए यह विश्वास करना बहुत कठिन हो रहा था कि कोई मृत्यु के इतने समीप होते हुए भी इतना शान्त कैसे हो सकता है और ऊपर से माँगा भी तो क्या माँगा? संन्यास? इतना छोटा बालक और ऐसी इच्छा अस्वाभाविक प्रतीत होती थी।

बालक ने सबको मौन देखकर कहा-

‘माँ। देखो, कैसे मृत्यु ने मुझे घेर रखा है और ईश्वर की व्यवस्था के आगे किसी का मोह नहीं चलता। तुम्हारी सारी आकांक्षाएँ भी मेरे साथ चली जाएँगी। अब तो मुझे आज्ञा दो।’ ‘मैं तुझे वचन देती हूँ कि यदि ईश्वर ने मेरी प्रार्थना सुन ली और तुझे आज जीवनदान दे दिया तो। बालक इसके बाद किनारे आ गया। गाँववाले समझ नहीं पाए कि यह कैसी लीला हुई। माता को आश्चर्य हुआ, मगर उससे कहीं अधिक प्रसन्नता हुई। उन्होंने अपने बालक को गले से लगा लिया। और जैसा माँ ने वचन दिया था, उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक कहा

‘जा पुत्र, जा। मैं तुझे आज्ञा देती हूँ संन्यास पथ पर जाने की। बस मेरी एक प्रार्थना है।’ ‘कहो माँ।’ बालक ने कहा। ‘क्या इस जीवन में तुझसे फिर मिल सकूँगी?’

‘अवश्य माँ। जीवनलीला के अन्त से पहले मैं तुमसे ज़रूर मिलने आऊँगा।’ पुत्र ने कहा। माँ ने फिर बालक को गले से लगा लिया। अगले दिन दो सूर्योदय हुए, एक तो ईश्वर द्वारा व्यवस्थित सूर्य और दूसरा उस माता का बालक, जो अपनी माता का आशीर्वाद लेकर निकल चुका था संसार से अज्ञान का अन्धकार मिटाने।

यही बालक आगे जाकर आदि शंकराचार्य नाम से विश्वविख्यात हुआ।

- हनी शर्मा, प्रथम वर्ष
(ऊर्जा एवं पर्यावरण विभाग)

सब अपने घर में हैं



पक्षी अपने सफर में है।
ख़मोशी हर एक पहर में है।
उदासी हर बसर में है।
मानव अब कहर में है।

काल फिर से सहर में है।
सब अपने घर में है।
सेठ अपने बिस्तर में है।
मजदूर अपने मुकद्दर में है।

राजनीति अपने चौसर में है।
मानवीयता अपने कनस्तर में है।
समाज अपने डर में है।
सब अपने घर में है।

संक्रमण अत्यंत तीव्र में है।
तीव्र स्वयं शीघ्र में है।
नजरें हर दम फि़क्र में है।
खतरा हर एक जि़क्र में है।

जीवन सिर्फ़ हिज़्र में है।
सब अपने घर में है।

- पुलकित उपाध्याय (शोधार्थी, मानविकी विभाग)

ये किसान इंसान है



ये किसान इंसान है
भगवान नहीं कोई हैवान नहीं
दरांती, हल, कुदाल औजार है
कोई हथियार नहीं
धरा को हरे पीले रंग देने वाले हाथ है
कोई तलवार नहीं ।

ये किसान इंसान है
भगवान नहीं कोई हैवान नहीं।

रुपए के मोल में खरीद सको

ये काया इतनी बेजार नहीं

सम्मान निधि बोल दया करो

ये स्वाभिमान को स्वीकार नहीं

इतिहासों के पन्ने पलट देखो

ये अधिकार है कोई मांग नहीं

समान सम्मान का वायदा करो

फिर किसान को भी इनकार नहीं

ये किसान इंसान है

भगवान नहीं कोई हैवान नहीं।

कलम की नोंक पे इसको नचाने वालों

तुम्हारे घर का राशन उगाने वाला

भले तुमको इनकी कद्र नहीं

क्या कोई किसान नहीं।

जिसकी मेहनत का सिंचा ख़ाया

उसकी बेकद्री भूल नहीं

पाप है, अपकार है, अपमान है

उसका कोई प्रायश्चित नहीं।

ये किसान इंसान है

भगवान नहीं कोई हैवान नहीं।

कुर्सियों पे तमाशबीन सुस्ताने का

सर्द रातों की सुबह, ज्येष्ठ की गर्मी

सत्ता को अधिकार नही

जिसको किसी मौसम में आराम नहीं

क्या उस किसान को मेहनत की

पाई पाने का कोई अधिकार नहीं

अर्थ का अर्थ क्या सिर्फ़ पूंजी में

दानों में उसका भाव नहीं।

ये किसान इंसान है

भगवान नहीं कोई हैवान नहीं।

राह में भले कीलें बिछा दो

ऊंची दीवारों से भी गुरेज नहीं

जिन्होंने देखी लाशे अपनों की

ये मुश्किल कुछ नहीं

अगर नियत नहीं साथ देने की

तो बोलने की हिम्मत क्यों नहीं

हाशिए पे लाकर क्यों मारते हो

क्या यह कौम को खत्म करने की नीयत नहीं।

ये किसान इंसान है

भगवान नहीं कोई हैवान नहीं।

एक बार फैसला तो करो

क्या अंजाम भुगतने की हिम्मत नहीं

लिख दो किताबों में भी

इस देश को किसानों की ज़रूरत नहीं

औरों से मांग करके खा लेना

फिर ऊंची कीमतों की फि़क्र नहीं

जब जमीर ही नहीं देश का

जमीनों के बिकने का राम नहीं

बस छोड़ देना कुछ इंच भर

वरना किसानों को जलाने की जगह भी नहीं।

ये किसान इंसान है

भगवान नहीं कोई हैवान नहीं।

- किरण जाखड़,

प्रथम वर्ष, रूनात्कोत्तर, ऊर्जा प्रणाली विभाग

सहकारी आंदोलनों में हिन्दी का योगदान

प्रस्तावना: भारतीय जीवन-दर्शन की आधारशिला ‘एकात्मता’ और सहस्तित्व है। यहाँ व्यक्ति को न केवल एक सामाजिक प्राणी माना गया है, बल्कि समस्त चराचर जगत के साथ उसका गहन संबंध स्वीकारा गया है। यह अवधारणा सहकारिता का मौलिक आधार बनती है जहाँ आत्म-कल्याण केवल समाज के सामूहिक कल्याण में ही संभव है।

वैदिक व उपनिषदों में सहकारिता सूत्र: ऋग्वेद में सहकार की भावना बार-बार प्रकट होती है

‘संगच्छध्वं संवदध्वं सं वो मनांसि जानताम्।’ (हम सब मिलकर घर्नें, मिलकर बोलें और मिलकर विचार करें।) ऋग्वेद 10.191.2

यह मंत्र केवल एकता का नहीं, बल्कि सहयोग के माध्यम से समाज निर्माण का स्पष्ट दार्शनिक निर्देश है।

तैत्तिरीय उपनिषदों में कहा गया:

‘सह नाववतु। सह नौ भुनक्तु। सह वीर्य करवावहै।’ (हम दोनों की रक्षा करें, हम दोनों का पोषण करें, हम मिलकर पुरुषार्थ करें।)

यहाँ गुरु और शिष्य के बीच का संबंध केवल एक ज्ञानार्जन का माध्यम नहीं, बल्कि सहकार का आदर्श रूप है।

पौराणिक दृष्टांत: श्रीमद्भगवद्गीता (3.11) में कहा गया है

‘देवान्भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः।’ (तुम देवताओं का यज्ञ से पालन करो, वे तुम्हारा पालन करेंगे।)

यह ‘पारस्परिक पोषण’ की अवधारणा है जो आधुनिक सहकारी संस्थाओं की बुनियाद बनती है। महाभारत में युधिष्ठिर के राज्य में वर्णित रामराज्य की कल्पना में सभी वर्गों का परस्पर सहयोग और दायित्वबोध प्रमुख था। भीष्म पितामह का यह कथन उल्लेखनीय है-

‘सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः।’ (सभी सुखी हो, सभी निरोग हों।)

सहकारिता एवं वसुधैव कुटुम्बकम् की वैश्विक कल्पना: ‘अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम्। उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम् ॥’ महा उपनिषद् 6.71-73

यह श्लोक सीमाओं, भाषाओं, जातियों और राष्ट्रों से परे एक ऐसे दृष्टिकोण का संकेत करता है जिसमें सम्पूर्ण सृष्टि को एक परिवार के रूप में देखा गया है। यह विचार केवल आध्यात्मिक नहीं, बल्कि नीति, समाज और अर्थव्यवस्था का भी मार्गदर्शक है।

ज़िन्दगी और मौत का संवाद

मौत मिले तो जिंदगी दोबारा साथ चलने को कहती है।
ना समझे कि कहाँ था जाना,
जिंदगी मुलाकात को तरसे और मौत हम पर ही मरती है। मैंने बोला
क्या मिलेगा तुझ जैसे मुसीबत के पहाड़ के साथ रहने में?
तेरे लिए तो जीना बड़ा सरल ही है कहने में।
जिंदगी ने बेगानी हंसी से कहा
चल, न दूँगी मुसीबत, फिर क्या तू जी लेगा
इस नामुन्द जिंदगी में,
यहाँ आराम का मोल नहीं है,
बल्कि श्रम का है जीने में
मैंने जिंदगी से कहा ना ना, तू धोखा देगी
उसे जो जिंदगी के लिए जीता था,
फिर तू ला देती उसे वहाँ
जहाँ मौत का दरवाजा हाशिए पर ही रहता था।
जिंदगी को मिला एक मौका और कुछ बोलने का, कहा
कि तू तो हिम्मत हार गया था, इसलिए ही अंत दिखाया था,
लेकिन सब मेरी ही गलती है
कि मैंने ही कुछ कम सिखाया था
मैंने पूछा मौत से बोल तू क्या देगी, मौत मुझे,
जब मैं तेरे द्वार पर आऊँगा?
न देगी तू तड़प कोई और ना मैं यहाँ से जाऊँगा।
मौत ने चिल्लाया और बोला
तू एक नाकाम इंसान था,
ना मैं तुझे अपनाऊँगी।
तेरे लिए जिंदगी नर्क है अगर,
तो वहीं तुझे ले जाऊँगी।
जिंदगी ने सोचा फिर अब इसे ऐसा सिखलाऊँगी
कि मौत भी अब इंतजार करेगी
कि अब ये जिंदगी कब मरेगी।
- सिद्धि मीणा (प्रथम वर्ष विद्युत अभियांत्रिकी विभाग)

लोकपरंपरा और ग्राम व्यवस्था

भारतीय ग्राम संरचना स्वयं एक सहकारी ढाँचे पर आधारित रही है जैसे ‘पंचायत’, ‘गोत्र-सभा’, ‘ग्राम सभा’। किसान, कारीगर, शिक्षक, ग्वाले, बुनकर आदि सभी वर्गों के बीच कार्य विभाजन और सहयोग से आत्मनिर्भर ग्राम व्यवस्था बनती थी। यह ‘सहकारिता’ का वास्तविक रूप था।

स्वतंत्रता आंदोलन में सहकारिता और हिन्दी की भूमिका

भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के वल राजनीतिक मुक्ति का आंदोलन नहीं था, बल्कि सामाजिक, आर्थिक और भाषायी चेतना का भी पुनर्जागरण था। इस चेतना में सहकारिता और हिन्दी भाषा की साझी भूमिका अत्यंत महत्वपूर्ण रही। जहां सहकारिता ने भारतीय समाज को आत्मनिर्भर और संगठित बनाने का माध्यम प्रदान किया, वहीं हिन्दी ने उसे जन-जन तक पहुँचाया, उसे एकता और संवाद का स्वरूप दिया।

महात्मा गांधी और ग्राम स्वराज

महात्मा गांधी ने ‘ग्राम स्वराज’ की परिकल्पना रखी थी, जिसमें प्रत्येक गाँव को आत्मनिर्भर, संगठित और सहयोगी इकाई के रूप में देखा गया।उनका मानना था:

‘भारत की आत्मा उसके गाँवों में बसती है। अगर हमें स्वराज्य चाहिए तो ग्रामों को स्वावलंबी और सहयोगी बनाना होगा।’ गांधीजी का यह विचार सहकारिता के सिद्धांत से पूर्णतः मेल खाता है। उन्होंने अपने आंदोलनों में हिन्दी को जनभाषा के रूप में अपनाया, ताकि सामान्य जन भी स्वतंत्रता संग्राम से जुड़ सकें।

हिन्दी-आंदोलन की भाषा

स्वतंत्रता आंदोलन में हिन्दी ने केवल संपर्क भाषा का कार्य नहीं किया, बल्कि यह एक विचारधारा का भी माध्यम बनी। हिन्दी में लिखे गए प्रेरणादायक नारे, लेख, पत्रिकाएँ, भाषण और कविताएँ जनता में चेतना जगाने का माध्यम बने। हिन्दी साहित्यकारों जैसे रामधारी सिंह दिनकर, मैथिलीशरण गुप्त, प्रेमचंद, और बालकृष्ण शर्मा ‘नवीन’ ने अपनी लेखनी से जनता में आत्मगौरव और सहयोग भावना को आगृत किया।

विनोबा भावे और भूदान आंदोलन

गांधी के उत्तराधिकारी माने जाने वाले विनोबा भावे ने भूदान आंदोलन की शुरुआत की, जिसमें उन्होंने देशभर में भ्रमण कर जमींदारों से जमीन का स्वैच्छिक दान कराया ताकि भूमिहीनों

को भूमि मिल सके। यह आंदोलन सहकारिता की भावना पर आधारित था परस्पर सहयोग और सामूहिक कल्याण का। विनोबा भावे हिन्दी को ‘आत्मा की भाषा’ कहते थे और उन्होंने अपने भाषणों तथा पत्राचार में हिन्दी को ही अपनाया।

‘सहकारिता केवल आर्थिक नहीं, नैतिक और आत्मिक संस्था है।’ विनोबा भावे

हिन्दी की संस्थागत भूमिका

1918 में जब गांधीजी ने बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में हिन्दी को राष्ट्रभाषा घोषित करने का आह्वान किया, उसी क्षण से हिन्दी को राष्ट्रीय एकता, सहकारिता और स्वतंत्रता के आंदोलन की सांगिनी भाषा के रूप में पहचान मिली।हिन्दी ने न केवल नेताओं को एक मंच पर लाने का कार्य किया, बल्कि गाँव-गाँव में जागरुकता का प्रवाह भी सम्भव बनाया।

राजभाषा और सहकारी नीति 1965 से

अब तक का विकास

भारतीय संविधान का अनुच्छेद 343 हिन्दी को संघ की राजभाषा घोषित करता है। परंतु संविधान द्वारा निर्धारित 15 वर्षों की अवधि (1950-1965) के उपरांत जब केन्द्र सरकार ने हिन्दी को कार्यान्वयन की भाषा बनाने की दिशा में कदम उठाया, तब यह प्रक्रिया भाषायी और प्रशासनिक दृष्टि से गहन योजना और नीति-निर्माण की माँग करने लगी।

1965 का हिन्दी कार्यान्वयन और सहकारिता नीति

1965 में राजभाषा अधिनियम पारित किया गया, जिसने हिन्दी को संघ की कार्यात्मक भाषा के रूप में स्थापित किया। इसके बाद हिन्दी का प्रयोग सहकारी संस्थानों में भी बढ़ने

लगा। 1966 में गठित राजभाषा आयोग ने सहकारी संस्थाओं, बैंकों, विभागों और संस्थानों को हिन्दी में कार्य करने के लिए प्रेरित और निर्देशित किया। इसी काल में सहकारिता क्षेत्र में भी नई ऊर्जा का संचार हुआ। 1969 में नाबार्ड की स्थापना की गई और ग्रामीण बैंकिंग, कृषि ऋण, स्व-सहायता समूहों आदि को संगठित करने में सहकारी संस्थानों को प्रमुखता दी गई।

सहकारिता मंत्रालय और हिन्दी

भारत सरकार के सहकारिता मंत्रालय , जो 2021 में स्वतंत्र रूप से गठित हुआ, ने हिन्दी में योजनाओं और कार्यक्रमों को जनसाधारण तक पहुँचाने की नीति अपनाई। विभागीय कार्यप्रणाली, योजनाओं की जानकारी, प्रशिक्षण मॉड्यूल और पोर्टल्स को हिन्दी में प्रस्तुत किया

जाने लगा।

सहकारी प्रशिक्षण और राजभाषा

राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम, भारतीय राष्ट्रीय सहकारी संघ और भारतीय सहकारिता बैंक जैसे संस्थानों ने हिन्दी में प्रशिक्षण पुस्तिकाएँ, हैंडबुक्स, मार्गदर्शिकाएँ और समाचार पत्र प्रकाशित किए। हिन्दी में सहकारी शिक्षा देने के लिए विशेष पाठ्यक्रम बनाए गए। सहकारिता की नींव तब तक मजबूत नहीं होगी, जब तक इसकी भाषा लोगों की भाषा नहीं बनेगी।- डॉ. राममनोहर लोहिया

ई-गवर्नेंस और डिजिटल हिन्दी

2010 के बाद डिजिटल इंडिया अभियान और ई-गवर्नेंस के विस्तार ने सहकारी संस्थानों को तकनीकी रूप से मजबूत किया। सरकारी पोर्टलों, जैसे सहकार से समृद्धि पोर्टल, ई-ग्राम स्वराज, आदि को हिन्दी में उपलब्ध कराया गया। इससे हिन्दीभाषी राज्यों में लोगों की भागीदारी बढ़ी।

राज्यों में हिन्दी और सहकारिता भारत में प्रभाव उत्तर, मध्य और पूर्व भारत के सहकारी आंदोलन का वास्तविक प्रभाव तभी संभव हो सका जब यह जनपदीय स्तर पर पहुँचा। उत्तर, मध्य और पूर्वी भारत जहाँ हिन्दी न केवल संवाद की बल्कि सांस्कृतिक पहचान की भाषा है - वहाँ सहकारिता को सामाजिक आत्मीयता और भाषायी सुलभता दोनों मिली। इन क्षेत्रों में सहकारी संस्थाओं ने हिन्दी भाषा के माध्यम से योजनाओं का प्रचार-प्रसार, प्रशिक्षण और कार्यान्वयन किया।

वितीय लेखांकन

महिला सशक्तिकरण हेतु सहकारी प्रशिक्षण

भविष्य की दिशा हिन्दी, डिजिटल सहकारिता और आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस का संभावित प्रयोग 21वीं सदी में सहकारिता की अवधारणा तकनीकी विकास के साथ नए आयाम ले रही है। डिजिटल भारत और कृत्रिम बुद्धिमत्ता के युग में हिन्दी भाषा न केवल एक संवाद माध्यम बनी हुई है, बल्कि तकनीक और सहकार के संगम का एक मजबूत सेतु बनकर उभरी है।

डिजिटल सहकारिता में हिन्दी की भूमिका

प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के ‘डिजिटल इंडिया’ और सहकार से समृद्धि जैसे अभियानों ने ग्रामीण क्षेत्रों में तकनीक की पहुँच को सुनिश्चित किया है।

- **बीरेन्द्र पाण्डेय**

(वरिष्ठ कार्य सहायक, केन्द्रीय पुस्तकालय)

डिब्बे की दुनिया, पटरी की बातें

छुक छुक ट्रेन चली,
पूँज उठाकर आगे बढ़ी,
तो दूसरी हुई आकर खड़ी,
छुक छुक ट्रेन चली ...
आते जाते लोगों को देखकर,
लगता जीवन कट जाएगा
यूँही सफर कर कर।
आज भी हाथ फैलाए घूमते मासूम यहाँ,
राजनेता बस झूठे वादे लेते वहाँ,
यात्री गण कृपया ध्यान दे
पटरी की बातें, डिब्बे की दुनिया,
बनाती रोज कई सपनों को असली कहानियाँ।
होता हजारों विचारों से ओत प्रोत मन,
संघर्ष के लिए तैयार होते सारे जन
ट्रेन आने तक,
विचारों का समंदर शांति से बहता,



-आस्था सिंह, रूनातक प्रथम वर्ष (विद्युत एवं इलेक्ट्रॉनिक्स अभियांत्रिकी विभाग)

वास्तविक धर्म



हिन्दू हो या मुस्लिम, सिख हो या ईसाई, सबको गले लगाना है, इस वर्ष हमें सबको साथ लेकर विकास की ओर कदम बढ़ाना है, सुन्दर भविष्य बनाना है, जो होना है, सो होना है। ये भूमि हैं किसानों की, सीमा पे खड़े वीर जवानों की, त्याग और बलिदानों की, इसीलिए तो हमें खुद को दृढ़ बनाना है, संकल्पवान होकर विकास की ओर कदम बढ़ाना है एक दिव्य प्रकाश फैलाना है, सारे जहां में अपना तिरंगा लहराना है, अपने देश का मान बढ़ाना है, जो होना है, सो होना है, हमें आत्मबल नहीं खोना है, हर चुनौती के सामने साथ में खड़ा होना है जो होना है, सो होना है। सुनो ! ये वक्त बड़ा बलवान है, ले जाएगा हम सबको शमशान है, लेकिन ये जीवन, उसका दिया गया स्वर्ण वरदान है वक्त कहता है हमसे जान लो अपने जीवन का क्या उद्देश्य है, इसका वास्तिवक ज्ञान पता करना तुम्हारा है काम। मत होना बुरे वक्त से कभी परेशान, बुरा वक्त ही बनाता है तुमको बलवान। सुनो ! ये वक्त बड़ा बलवान।

- प्रिंस प्रजापत, तृतीय वर्ष (रसायन अभियांत्रिकी विभाग)

४० नीयत से ईश्वर खुश होते हैं, दिखावे से इंसान, यह आप पर निर्भर है, आप किसे प्रसन्न करते हैं। ४१

हमारी बिटिया एक वरदान

आज के आधुनिक युग में जहाँ सभी बेटों से कंधा मिलाकर चल रही हैं हमारी बेटियों, लड़कों के साथ हर क्षेत्र फतह कर रही हैं लड़कियाँ, आज भी बहुत से इलाके हैं जहाँ आज भी समय व समाज की बेड़ियों में जकड़ी पड़ी हैं बेटियों की उड़ान कैद हैं, उनके सपने और वह बेड़ियों और कोई नहीं अपितु डाली गयी है उनके स्वयं के माता-पिता द्वारा। आज ऐसी ही कहानी प्रस्तुत करने जा रहा हूँ जो प्रयासरत है बेटियों के खोये हुए अस्तित्व को उजागर करने हेतु।

यह कहानी है राजस्थान राज्य के एक छोटे से माँव दाँतरी की जहाँ रहते थे मोहन बाबू अपनी पत्नी एवं चार पुत्रियों के साथ। मोहन बाबू सेना में कार्यरत थे और अभी कुछ दो माह पूर्व ही वह सेवानिवृत्त होकर अपने गांव आए थे। उनकी अर्धांगिनी रमा देवी एक सुदृण बहिणी थी। भगवान ने मोहन बाबू को चार पुत्रियों के सुख से नवाज़ा था परंतु यह सुख कहने योग्य ही था। सेना में नौकरी करने के कारण तथा अपनी रूढ़िवादी सोच के वशिभूत वह पुत्रियों को केवल बोल के रूप में मानते थे। मोहन बाबू की आरंभ से ही पत्र की आस थी और इसी आस को पूर्ण करने हेतु वह चार पुत्रियों को जन्म दे बैठे। उसकी सबसे वरिष्ठ पुत्री सुनीता पंद्रह वर्ष की थी. फिर थी पुत्री रजनी तेरह वर्ष की, फिर थी पुत्री शशि दस वर्ष की और सबसे अनुज पुत्री ऊशा थी जो कि नौ वर्ष की थी।

पुत्र की चाह के वशिभूत होने के कारण मोहन बाबू ने कभी भी अपनी पुत्रियों को एक बाप का प्यार नहीं दिया। वह कभी भी अपनी पुत्रियों से सीधी बात नहीं करते थे। उनकी पुत्रियाँ यह सोच-सोचकर थक जाती थी कि उनके बावा उनके प्रति अपने रूखे व्यवहार को कब परिवर्तित करेंगे। उनकी वरिष्ठ पुत्री सुनीता इस बात से पूर्णतः अवगत थी कि उसके बाबा को पुत्र की चाह है और

वह अपनी पुत्रियों को वरदान, नहीं अपितु, अभिशाप के रूप में देखते हैं। इन्ही मोहन बाबू के एक समे भ्राता भी थे जिनका नाम था रामलाल और यह अत्यंत खुले विचारों के धनी थे। वह भी अपने अग्रज की तरह सेना से सेवानिवृत्त हुए थे और उनकी भी दो लड़कियों कला एवं भावना थी। वह अपनी पुत्रियों से अत्यधिक प्रेम करते थे तथा उन्हें हर रूप से प्रोत्साहन देते थे। सुनीता व उसकी बहनों को भी वह अत्यधिक प्रेम करते थे।

एक दिन सुनीता अपने चाचा के समक्ष गयी और कहा, कि वह ऐसा कुछ करना चाहती है जिससे उसके बाबा की बेटियों के प्रति रखी दुई रूढ़िवादी सोच समाप्त हो जाए। सुनीता के यह कहने भर से उसके चाचा उसका साथ देने को तैयार हो गये और उससे उसके रुझान के बारे में पुछा। जिस पर सुनीता ने सेना में भर्ती होने वी इच्छा जतायी। उसके चाचा की आँखें गर्व से भर आयी और उन्होंने उसे यह आशवासन दिया कि वह उसे सेना में भर्ती हेतु पूर्ण प्रशिक्षण देंगे। परंतु सुनीता ने कहा कि यह बात वह अपने बावा को तब बताएंगी जब वह अपना सेना भर्ती का लक्ष्य प्राप्त कर लेगी।

अपने लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु सुनीता पूर्णत जुट गयी। वह प्रतिदिन सुबह चार बजे उठकर दौड़ तथा व्यायाम करने लगी। उसकी आँखों में अब केवल और केवल एक ही लक्ष्य दिखायी पड़ता था और वह था अपने बाबा की सोच को बदलना। करीब पांच साल की कड़ी मेहनत के पश्चात सेना की ओर से दांतिरि माँव में आयोजित एक भर्ती रैली में सुनीता अपने चाचा संग भाग लेने हेतु पहुँची परंतु वह यह नहीं जानती थी कि इस रैली को देखने उसके बाबा मोहन बाबू भी आए थे।

- ईशान अरोड़ा
शोधार्थी, मानविकी विभाग)

धर्म, कर्तव्य और नैतिकता के प्रेरक: श्रीकृष्ण

श्रीकृष्ण का नाम लेते ही एक ऐसी छवि उभरती है जो मुस्कान में भी गंभीरता लिए है, बांसुरी की मधुरता में भी गहन नीति छिपी है, और लीला में भी गहरी शिक्षा समाई हुई है। वे केवल द्वारिका के राजा या अर्जुन के सारथी ही नहीं थे, वे संघर्षशील मानवता के मार्गदर्शक थे। उनका जीवन, उनका व्यवहार, और उनके उपदेश आज भी धर्म, कर्तव्य और नैतिकता के मर्म को समझने का सर्वोत्तम माध्यम हैं।

श्रीकृष्ण ने हमें यह सिखाया कि धर्म केवल ग्रंथों में पढ़ने की वस्तु नहीं, बल्कि आचरण में उतारने का विषय है। उन्होंने कभी कठोर उपदेश नहीं दिए, बल्कि अपने जीवन से उदाहरण प्रस्तुत किए। बचपन में माखन चोरी से लेकर महाभारत के युद्ध तक, उनके हर चरण में एक बड़ी सीख छिपी है। जब उन्होंने गोवर्धन पर्वत उठाया, तब यह संदेश दिया कि सामाजिक समस्याओं से लड़ने के लिए सामूहिकता और नेतृत्व की ज़रूरत होती है। जब उन्होंने कंस का वध किया, तब यह बताया कि अन्याय कितने भी निकटजन के कारण क्यों न हो, उसे समाप्त करना ही धर्म है।

श्रीकृष्ण के जीवन में नैतिकता का स्थान अत्यंत गहरा है। उन्होंने अर्जुन से गीता के माध्यम से यही कहा कि जीवन की सबसे बड़ी नैतिकता है, अपने कर्तव्य को बिना मोह के निभाना। आज जब युवा पीढ़ी अक्सर धर्म को केवल एक रीति-रिवाज या कर्मकांड समझती है, तब श्रीकृष्ण का सन्देश और अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है। उन्होंने यह स्पष्ट कर दिया कि धर्म केवल पूजा-पाठ नहीं, बल्कि वह है जो मानव को उसके कर्तव्य की ओर प्रेरित करे, और जो सामाजिक कल्याण की भावना से जुड़ा हो।

श्रीकृष्ण का धर्म केवल युद्ध या पूजा से जुड़ा हुआ नहीं था, वह हर परिस्थिति में संतुलन बनाए रखने की कला था। वे कभी एकतरफा नहीं हुए। उन्होंने धर्म के नाम पर अंधभक्ति को भी नहीं अपनाया, और अधर्म के नाम पर क्रूरता को भी नहीं बढ़ावा दिया। उनकी नीति थी जो समय के अनुकूल हो, वही धर्म है। आज के युग में, जहाँ व्यक्तिगत स्वार्थ, अनैतिकता और सामाजिक विघटन बढ़ रहा है, श्रीकृष्ण का जीवन एक प्रकाशस्तंभ की तरह है। उनकी बांसुरी की धुन केवल राधा के लिए नहीं थी वह एक ऐसी पुकार



थी, जो हर हृदय को सत्य, करुणा और धर्म की ओर खींचती है। उनका जीवन हमें सिखाता है कि केवल भाषण देना पर्याप्त नहीं, स्वयं जीकर उदाहरण बनना ही सच्चा नैतिक धर्म है।

श्रीकृष्ण के जीवन से हमें यह भी सीखने को मिलता है कि कभी-कभी धर्म की रक्षा के लिए नीति और चातुर्य का भी सहारा लेना आवश्यक होता है। जैसे उन्होंने महाभारत में अर्जुन को न सिर्फ शस्त्र चलाना सिखाया, बल्कि विवेक और धैर्य का महत्व भी बताया। जब युद्ध अपरिहार्य हो, तब भागना नहीं, बल्कि विवेक से लड़ना ही धर्म है। उनका जीवन हमें यह भी सिखाता है कि प्रेम और धर्म विरोधी नहीं, पूरक हैं। राधा के प्रति उनका प्रेम जितना आत्मिक था, उतना ही अडिग था धर्म के प्रति उनका समर्पण। यही श्रीकृष्ण की सबसे बड़ी विशेषता है कि वे हर भूमिका में संतुलन साधते हैं। वे ग्वाला भी हैं, मित्र भी, योद्धा भी, और गुरु भी। उनके अंदर हर रिश्ते की गहराई और हर भूमिका की गंभीरता थी।

आज, जब समाज में धर्म के नाम पर भेदभाव हो रहा है, कर्तव्यों से भागा जा रहा है, और नैतिकता को नजरअंदाज किया जा रहा है - तब श्रीकृष्ण की गीता को केवल ग्रंथों में नहीं, आचरण में उतारने की ज़रूरत है। जब तक समाज में गीता के संदेश को आत्मसात नहीं किया जाएगा, तब तक न तो धर्म बचेगा, न ही समाज टिकेगा।

इसलिए श्रीकृष्ण आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं जितने महाभारत के युग में थे। उनका जीवन और शिक्षाएँ हमें हर बार यह याद दिलाती हैं कि धर्म कोई रूढ़िवादिता नहीं, बल्कि जीवन जीने की सच्ची कला है; कर्तव्य कोई बोझ नहीं, बल्कि आत्मा की स्वतंत्रता का माध्यम है और नैतिकता कोई दिखावा नहीं, बल्कि मानवता की आत्मा है।

- पवन कुमार शर्मा, अधीक्षक केन्द्रीय पुस्तकालय

जलवायु परिवर्तन से बचने का एकमात्र उपाय

सदियों से मानव जाति ने पृथ्वी के संसाधनों का निर्मम, निरंतर और अविवेकी दोहन किया है। महात्मा गांधी ने कहा था- पृथ्वी हर व्यक्ति की आवश्यकता पूरी कर सकती है, लेकिन हर व्यक्ति के लालच को नहीं। दुर्भाग्यवश, हमने अपनी आवश्यकताओं और लालच के बीच का संतुलन खो दिया है। आज उपभोक्तावाद अपने चरम पर है। लोगों की इच्छाएँ असीमित हो चुकी हैं नए-नए वाहन, बड़े मकान, अनगिनत कपड़े. जूते, आभूषण और आधुनिक सुख-सुविधाएँ। साइकिलों का स्थान बड़ी और आलीशान गाड़ियों ने ले लिया है। हर घर में अधिक एयर कंडीशनर, हीटर और बिजली के उपकरण चल रहे हैं। छुट्टियों में दूर-दराज की यात्राएँ भी अब एक सामान्य जीवनशैली का हिस्सा बन चुकी हैं, जिनमें ईंधन और बिजली का अपार उपभोग होता है।

इन सबका दुष्परिणाम यह है कि वातावरण में अत्यधिक कार्बन डाइऑक्साइड उत्सर्जित हो रही है। यह गैस सैकड़ों वर्षों तक वातावरण में बनी रहती है और वैश्विक तापमान बढ़ाती है। इसी के कारण हर वर्ष पृथ्वी का ओवरशूट दिवस और जल्दी आता जा रहा है। वर्ष 2025 में यह दिन 25 जुलाई को आ गया, जिसका अर्थ है कि पृथ्वी की प्राकृतिक वहन क्षमता जुलाई के अंत तक ही समाप्त हो गई और इसके बाद आठ अरब लोगों की सारी गतिविधियाँ सीधे-सीधे पृथ्वी के तापमान को और बढ़ा रही हैं। वैज्ञानिकों ने पेरिस जलवायु समझौते के अंतर्गत यह स्पष्ट कर दिया है कि पृथ्वी का तापमान 1.5 डिग्री सेल्सियस से अधिक बढ़ना अस्वीकार्य है। यदि यह सीमा पार हो गई तो जलवायु परिवर्तन अपरिवर्तनीय हो जाएगा। विशेषज्ञ चेतावनी दे चुके हैं कि यदि उपभोग की वर्तमान प्रवृत्ति नहीं रुकी तो आने वाले चार वर्षों के भीतर यह सीमा पार हो सकती है।

जलवायु परिवर्तन के परिणाम आज हमारे चारों ओर स्पष्ट दिखाई दे रहे हैं। भीषण बाढ़, जंगलों में विनाशकारी आग, असामान्य हीट वेव, क्लाउडबर्स्ट, पेयजल की कमी और खाद्यान्न संकट। भारत के कई क्षेत्र इसका प्रत्यक्ष उदाहरण हैं। हाल ही में उत्तरी भारत में भारी वर्षा और बादल फटने की कई घटनाएँ हुईं। पुणे, देहरादून, गुरुग्राम, कश्मीर, कटरा और चेन्नई जैसे मशहूर गंभीर संकट से जूझ रहे हैं। पंजाब तो मानो पानी में डूब गया हो। लाखों लोगों को विस्थापित होना पड़ा और अन्न भंडार नष्ट हो गए। यह पीड़ा केवल आँकड़ों तक सीमित नहीं है, बल्कि जन जीवन को प्रतिदिन प्रभावित कर रही है।

यहाँ यह स्पष्ट कर दूँ कि जलवायु परिवर्तन की

हौसला

तूफान से डर जाओगे तो कश्ती पार कैसे होगी
हार से डर जाओगे तो जय जयकार कैसे होगी
सपने को हकीकत बनने में थोड़ा समय तो लगेगा
कुछ खुशियों को बीच में त्यागना तो पड़ेगा
कुछ अपने भी रुठ जायेंगे तो निराश न होना
गलत लोगों के कभी साथ न होना
दूर रहते हो तो अपनों की भी याद आयेगी
कभी कभी पुरानी यारी भी सताएंगी
सब कुर्बानियाँ देकर तुम कभी टूट न जाना
मंजिल को अपनी कभी भूल न जाना
इक दिन सफलता मिलने की रात ऐसी होगी
तनहाई के बाद सबसे मिलने के एहसास जैसी होगी
हिम्मत न हार तू करेगा कमाल हौसला तो रख
जिन्दगी की राहों से, मुश्किलों का पत्थर हटा दें
अपनी राह खुद बनाकर, दूसरों को चुप करा दे
मुश्किलों से न डर, तू तो है निडर हौसला तो रख
तू मेरी इतनी बात मान, गैरों पर मत दे ध्यान
जो भी तेरा लक्ष्य है, उसी को तू खुद मान
हौसला तो रख
आयेगा तेरा इक दिन, जब ऊँचा होगा सबका सिर
मन में लेकर ये विश्वास, तू अपना कर्म कर फिर
हौसला तो रख।

- विपिन मौर्या, प्रथम वर्ष
(स्नातकोत्तर, संरचनात्मक अभियांत्रिकी)



यह त्रासदी केवल पेड़ लगाने, सौर ऊर्जा या ई-वाहनों पर निर्भर होने से नहीं रुकने वाली है। जलवायु संकट एक आपातकालीन स्थिति है। इसे केवल सतत जीवनशैली अपनाकर ही नियंत्रित किया जा सकता है। पेड़ लगाना या ई-वाहन अपनाना उतना ही अपर्याप्त है, जितना कि कैसर के लिए पैरासिटामोल लेना। अब हमें अपनी जीवनशैली की मूलभूत संरचना बदलनी होगी।

इस दिशा में हमें कुछ ठोस संकल्प लेने होंगे। किसी भी वस्तु को खरीदने से पहले दो बार सोचें क्या वास्तव में इसकी आवश्यकता है? कक्षाओं, दफ्तरों और घरों से निकलते समय सभी पंखे और लाइटें बंद करें।

एसी का प्रयोग सीमित करें, हल्के और आरामदायक कपड़े पहनें। भोजन की बर्बादी ना करें। पोस्टर, बैनर और कागज का अत्यधिक प्रयोग न करें। त्योहारों, उत्सवों और आयोजनों में केवल आवश्यक सामग्री का ही उपयोग करें, अनावश्यक सजावट और पैकेजिंग से बचें। हमारे संस्थान में दीक्षांत समारोह, टेक्नो-फेस्ट और सांस्कृतिक आयोजन जैसे बड़े कार्यक्रम आयोजित होते रहें हैं। इन सभी आयोजनों को भी हमें सतत दृष्टिकोण से ही आयोजित करना होगा। हर पोस्टर, हर सजावट, हर भोजन केंद्र पर हमें यह ध्यान रखना होगा कि हम कार्बन उत्सर्जन और अपशिष्ट को न्यूनतम रखें।

प्रिय साथियों अब समय आ गया है कि हम अपने आरामदायक दायरे से बाहर निकलें और एकजुट होकर जलवायु संकट का सामना करें। याद रखिए, यदि हम आज नहीं बदले तो कुछ नहीं बदलेगा और यह त्रासदियों बढ़ती ही जायेगी और आने वाली पीढ़ियों हमें क्षमा नहीं करेंगी। आइए, हम सब मिलकर सतत जीवनशैली अपनाने का संकल्प ले, ताकि हमारी धरती, हमारा भविष्य और हमारी आने वाली पीढ़ियाँ सुरक्षित रह सकें। यही एकमात्र रास्ता है। मेरी शुभकामनाएं

- डॉ निवेदिता कौल
सह-आचार्य, जनपद अभियांत्रिकी विभाग

संघर्ष



संघर्षों की आजमाइश बड़ी थी
की मैं टूटकर बिखर जाऊँ
छोटा सा ख्याब देखने पर ही
कठिन डगर से सिहर जाऊँ,
राह भरी थी शूलों से,
दरख्तों की दीवार खड़ी,
इन तूफानी लहरों में,
बिन पतवार ही रह जाऊँ
जीवन रुपी धारा को
संघर्षों ने जब घेरा था
तीव्र प्रखर सूरज पर जैसे
उन्मादी मेघों का डेरा था
पर मानी न मैंने हार कभी
यहीं निकट नया सवेरा था
माना की थी ये राह कठिन
था प्रबल हौसला मेरा भी
टूटी हुई कश्ती से ही
पतवार बना साहिल पाऊँ।

महिमा विश्वकर्मा
शोधार्थी (वास्तुकला एवं संयोजन विभाग)